बिहार सरकार

कृषि विभाग

जैविक खेती

जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु
एक दिवसीय कार्यशाला दिनांक 14.03.2010 को
माणिकपुर उच्च विद्यालय सरैया, मुजफ्फरपुर के आयोजन में
कृषकों को वितरण हेतु पुस्तिका

BAMETI

बिहार कृषि प्रबंधन एवं प्रसार प्रशिक्षण संस्थान (बामेती)
पो० बिहार वेटनरी कॉलेज, जगदेव पथ, पटना-800 014
फोन : 2227039
www.bameti.org, ई-मेल : **bameti.bihar@gmail.com**

जैविक खेती

जैविक खेती जो वर्तमान खेती से स्थाई खेती की दिशा में जाने को प्रेरित करती है तथा हमारी खेती को टिकाऊ बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जैविक खेती का अर्थ विज्ञान द्वारा खोजे गये प्रकृति के रहस्यों व वरदानों का कृषि क्षेत्र में उपयोग कर उत्पादन को उचित स्तर पर स्थाई रूप से प्राप्त करना हैं इसमें रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों का कोई उपयोग नहीं किया जाता है। सम्पूर्ण प्रबन्धन प्राकृतिक-मित्र-तकनीकों से किया जाता है। इसी कड़ी में जैविक खाद का महत्वपूर्ण अवयव वर्मी कम्पोस्ट है, जो गोबर का अन्य कार्बनिक पदार्थों को तेजी से खाकर इसकी खाद बना देते हैं तथा फसल की गुणवत्ता के साथ-साथ भूमि की गुणवत्ता को बढ़ाने में मदद करते हैं। वर्मी कम्पोस्ट को जन-जन तक सरल भाषा में किसानों तक पहुँचाना एक संकल्प है यह तभी सफल होगा जब एक साधारण व्यक्ति अपने पास उपलब्ध कचरों को पुर्नचक्रण कर पौधों हेतु वर्मी कम्पोस्ट खाद उत्पादित कर उसे व्यवहार में ला सकेगा। इस प्रोत्साहन से सभी सजीवों के साथ-साथ सम्पूर्ण पर्यावरण के लिए हितकर होगा।

जैविक खेती क्यों ?

खाद्य सुरक्षा की दृष्टि से 1960 के दशक में हरित क्रान्ति का सूत्रपात हुआ जिसमें उत्पादकता वृद्धि हेतु नवी तकनीकों का विकास हुआ। इस तकनीकी पैकेज में मोने क्रॉपिंग को बढ़ावा देने के लिये उच्च उत्पादकता वाली प्रजातियों को प्रोत्साहित किया गया। इसके अतिरक्त मशीनों द्वारा भूमि की तैयारी, खपरतवार नष्ट करने हेतु हरबीसाइड का प्रयोग, रोब एवक कीट प्रबन्धन हेतु कीट नाशकों (पेस्टिसाइड/इन्सेक्टिसाइड) के प्रयोग के साथ ही पौधों को पोषक तत्व उपलब्ध कराने हेतु रासायनिक खादों का इस्तेमाल एवं सिंचाइ हेतु अत्यधिक पानी का उपयोग आदि उपाय सम्मिलित थे। हरित क्रान्ति को मिली शुरूआती सफलता के बाद यह स्पष्ट होने लगा कि इस प्रकार की कृषि पद्धति से हमारे प्राकृतिक संसाधनों जैसे मृदा, पानी, जैव-विविधता और मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। जैसे-

1. किसी समय में उपजाऊ रहे क्षेत्रों की इस पद्धति से खेती करने पर भू7क्षरण या सेलिनाइजेशन इत्यादि की वजह से उपजाऊ शक्ति कम होती गयी।
2. पानी के स्रोत या तो रसायनों के प्रयोग से प्रदूषित हो गये या सिंचाई के लिए उनका अत्यधिक दोहने कर लिया गया।
3. कई जंगली एवं घरेलू पेड़-पौधों की प्रजातियाँ एवं जीव-जन्तु समाप्ति की कगारपर पहुँ गये।

4. कीटनाशी एवं रसायनों के अवशेषों का खाद्य पदार्थों एवं पेयजल में आ जाने से मनुष्य के स्वास्थ को भी नुकसान पहुँचने लगा।

उपरोक्त वर्णित कृषि पद्धति से यह निष्कर्ष निकला कि-

1. मृदा संरचना खराब हो रही है।
2. यह पर्यावरण को दूषित कर रहा है।
3. इस पद्धति से उत्पन्न खाद्य पदार्थों के सेवन से स्वास्थ्य के लिए नुकसान की संभावनायें बढ़ गई है।
4. उत्पादित खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता में कमी आई है।
5. यह पद्धति ऊर्जा के अधिक उपयोग पर आधारित है।
6. यह पद्धति अधिक पशुधन के इस्तेमाल पर आधारित है।
7. यह पद्धति आर्थिक रूप से महंगी है।

इस पद्धति से खेतीकरने पर मृदा, पर्यावरण एवं उत्पादों के सेवन से मानव स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान के मद्देनजर 'जैविक खेती' की बात उभर कर आयी क्योंकि इस पद्धति से खेती करने पर :

1. मृदा क्षरण एवं मृदा की उत्पादकता को बनाये रखा जासकता है।
2. सिंचाई हेतु प्रयोग होने वाले पानी का प्रदूषण लगभग ना के बराबर होता है।
3. वन्य जीव जन्तुओं को सुरक्षा मिलती है।
4. जैव विविधता में अभिवृद्धि होती है तथा ऐसे क्षेत्रों का विकास होता है।
5. पशुओं को अच्छा उपचार मिलता है।
6. बाहय स्रोतों से प्राप्त आगत अवयव एवं ऊर्जा का कम प्रयोग होता है।
7. एन्टीबायोटिक्स जानवरों से प्राप्त उत्पाद हारमोन्स एवं एन्टीबायोटिक्स के अवशेषों से मुक्त रहते हैं।
9. उत्पाद गुणवत्ता एवं स्वाद में अच्छे होते हैं तथा इनकी भण्डारण क्षमता अच्छी होती है।

जैविक खेती क्या है ?

अमेरिका के कृषि विभाग (यू.एस.डी.ओ.ए.) के अनुसार जैविक खेती, कृषि उत्पादन की एक ऐसी प्रणाली है जिसमें कृत्रिम रासायनिक खादों, कीटनाशी दवाओं, फसल बढ़ाने वाले हारमोन्स, कृत्रिम रसायनों से बने पशु आहारों के प्रयोग के स्थान पर मृदा की उत्पादकता को बनाये रखने, पौधों को उपयोगी तत्व उपलब्ध कराने, खरपतवार एवं कीट प्रबन्धन हेतु निम्न विषयों के कुशल प्रबन्धन पर ध्यान दिया जाता है।

(क) फसल चक्र (क्रॉप रोटेशन) (ख) फसल अवयव (क्रॉप रेज्यूड्यूज) (ग) जानवरों से प्रापत गोबर खाद (घ) लेग्यूम्स (च) हरी खाद (ग्रीन मैन्यूर) (छ) अन्य स्रोतों से प्राप्त जैविक अवशेष (ज) जैविक खरपतवार एवं कीट प्रबन्ध

जैविक खेती के अन्तर्गत मृदा को एक जीवित प्रणाली (living system) माना गया है–जिसमें लाभकारी सूक्ष्मजीवी (organisms) की भूमिका अहम मानी गई है। जो मृदा, पौधों, जानवरों एवं मनुष्य के बीच एक आवश्यक कड़ी (essential link) स्थापित करती है।

1. **पारम्परिक खेती** : पारम्परिक खेती वह है जो 1960 के दशक से प्रारम्भ हुई एवं हरित क्रान्ति से प्रभावित नहीं हुई है एवं जिसमें कृत्रिम रसायनों, कीटनाशियों व गुणसूत्रों के विच्छेदन से तैयार प्रजातियों का प्रयोग नहीं किया गया।

2. **टिकाऊ खेती** : यह खेती की वह विधि है जो पर्यावरण, प्राकृतिक संसाधनों के संवर्द्धन, आर्थिक रूप से दक्ष एवं सामाजिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम व तुलनात्मक दृष्टि से व्यावसायिक है और जैविक खेती से काफी मेल खाती है।

3. **आधुनिक खेती** : यह पद्धति क्षेत्र विशेष में की जा रही खेती के तरीकों पर निर्भर करती है जैसे पारम्परिक या आधुनिक तरीके, लेकिन आज के परिप्रेक्ष्य में कन्वेन्शनल एग्रीकल्चर में जैविक खेती के विपरीत कृषि रसायनों का प्रयोग किया जाता है।

4. **लीसा** : इसमें न्यून रूप से कृषि रसायनों का प्रयोग किया जाता है, लेकिन स्थानीय रूप से उपलब संसाधनों को फार्म सिस्टम में उपलब्ध अवयवों या घटकों से जोड़ कर दिया जाता है ताकि दोनों के संयुक्त प्रभावों से अच्छ परिणाम प्राप्त हों। वाहृय अवयवों का उसी दशा में प्रयोग संभव है जब इनके अभाव से बायलोजकल गतिविधियाँ प्रभावित हो रही हों।

5. **इनटीग्रेटेड प्रोडक्शन** : औद्योगिक रूप से विकसित देशों में इस कृषि पद्धति के अन्तर्गत कृत्रिम रसायनों का प्रयोग न्यूनतम स्तर पर किया जाता है। पौधों की सुरक्षा हेतु बायो कन्ट्रोल तरीका एवं रासायनिक कीटनाशियों का मिला-जुला प्रयोग कियाजाता है। यदि बीमारी एवं कीटों का प्रभाव एक सीमा से बाहर हो जाता है तो रासायनिक कीटनाशियों का प्रयोग किया जाता है व पौधों में आवश्यक तत्वों की पूर्ति हेतु रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग भी किया जाता है लेकिन तत्वों की अधिकतम सीमा निर्धारित की गई है।

6. **बायो-डायनेमिक खेती** : इस कृषि पद्धति में जैविक खेती हेतु निर्धारित सिद्धान्तों एवं मानकों का पालन किया जाता है लेकिन इसमें आध्यात्मिक सिद्धान्तों द्वारा अवयवों को तैयार कर उनका प्रयोग खेती करने में किया जाता है। यह खेती आस्ट्रियन दार्शनिक रूडोल्फ स्टेनर के सिद्धान्त एनप्रोसिफ पर आधारित है।

वर्मी कम्पोस्ट

वर्मीकम्पोस्ट का उत्पादन काफी सरल एवं उत्तम है। सरल शब्दों में कृत्रिम विधि द्वारा केंचुआ पालने को वर्मीकल्चर और इन्हीं केंचुए द्वारा बेकार कार्बनिक पदार्थो से जैविक खाद बनने की प्रक्रिया को वर्मी कम्पोस्टिंग कहते हैं। कृत्रिम विधि से केंचुए पालना (वर्मीकल्चर) और केंचुए की मदद से जैविक खाद बनाना

(वर्मीकम्पोस्टिंग) दो अलग-अलग परन्तु मिली-जुली क्रियायें हैं। इस क्रिया को वर्मीटेक्नोलॉजी कहते हैं।

केंचुआ मिटट्ी में पाये जाने वाले जीवों में सबसे प्रमुख है। ये अपने आहार के रूप में मिटट्ी तथा कच्चे जीवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजारते हैं जिससे वह महीन कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते हैं और अपने शरीर से बाहर छोटी-छोटी कास्टिंग्स के रूप में निकालते हैं। यही वर्मीकम्पोस्ट है। इस विधि द्वारा कम्पोस्ट मात्र 45 से 75 दिनों में तैयार हो जाता है। यह खाद बहुत ही प्रभावशाली होती है तथा इसमें पौधों के लिए सभी पोषक तत्व भरपूर मात्रा में मौजूद होते है तथा पौधे इनको तुरन्त ग्रहण कर लेते हैं। वर्मीकम्पोस्ट में केंचुओं की कास्ट, उसके अवशेष मल एवं उनके अण्डे, कोकून, लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु, मुख्य एवं सूक्ष्म पोषक तत्व और अपचित जैविक पदार्थो का मिश्रण सम्मिलित रहता है, जो मृदा को लम्बे समय तक उपजाऊ और उपयोगी बनाता है। यही कारण है कि वर्मीकम्पोस्टिंग को एक अति महत्वपूर्ण एवं क्रांतिकारी प्रौद्योगिकी के रूप में अपनाया जाने लगा है। इस तकनीक का प्रचार-प्रसार कर न केवल टिकाऊ खेती का वृहद् आधार तैयार किया जा सकता है, बल्कि गरीब किसानों की खेती को सस्ती व लाभकारी बनाने के लिए एक कारगर उपाय भी उन्हें उपलब्ध कराया जा सकता है। वर्मीकल्चर और वर्मीकम्पोस्टिंग का सही उपयोग हमारी कृषि के लिए वरदान साबित हो सकता है क्योंकि केंचुए सड़ते-गलते पदार्थ को जैविक खाद में तब्दील कर देते है।

वर्मीकल्चर से आर्थिक आमदनी होने की क्षमता इतनी अधिक है कि यह बहुत तेजी से एक उद्योग का रूप लेने लगी है। वर्मीकम्पोस्ट के व्यावसायीकरण के लिए इसकी तीन महत्वपूर्ण विशेषतायें उत्तरदायी हैं :-

1. केंचुए हमारे ईर्द-गिर्द फैले कचरे को एक स्वस्थ, उपयोगी एवं पौष्टिक खाद के रूप में बदलने की विशेष क्षमता रखता है। जो भी इसे अपने आर्थिक लाभ के लिए उत्पादन करना चाहते है उनके लिए केंचुए की खाद्य पदार्थो की आसानी से उपलब्धता हो जाती है। सामान्यतया इनके खाद्य पदार्थों में मवेशियों के जैसे गाय, भैंस, भेड़, सूअर, घोड़े इत्यादि के गोबर का इस्तेमाल होता है जो आसानी से उपलब्ध हो जाता है।
2. वर्मीकम्पोस्ट बनने की प्रक्रिया में केंचुए की संख्या 2 से 4 महीने में दुगुनी हो जाती है। इनकी संख्या काफी तेजी से बढने के कारण जरूरत भर केंचुआ रखकर शेष केंचुओं को बेचकर अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की जा सकती है।
3. वर्मीकम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा इतनी अधिक होती है कि उद्यान फसल लगाने वाले, बड़े स्तर पर खेती करनेवाले एवं अन्य खेती जैसे औषधीय एवं सगंध पौधों की खेती, फूलों की खेती करने वाले इसकी ओर आकर्षित हो रहे

हैं साधारण कम्पोस्ट और उर्वरक के मुकाबले इसकी पोषक तत्व की मात्रा बहुत ज्यादा होती हैं। केंचुए से निकले हुए खाद में म्यूकस की मात्रा भी काफी अधिक होती है। यह धीरे-धीरे घुलता है और पौधों को पोषक तत्व लगातार मिलते रहते हैं। वर्मी उत्पाद की मिटट्री संरचना बहुत अच्छी होती है, भुरभुरी होती है, इसमें वायुसंचार होता है तथा इसमें पानी को अवशोषित करने की क्षमता होती है। यह उत्पाद पौधों के जड़ों को बहुत गर्म और ठंढे तापमान से, अपरदन एवं खरपतवार के बीजों से सुरक्षा प्रदान करता है।

वर्मी कम्पोस्ट की विशेषताएँ

वर्मीकम्पोस्ट के भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुण उनको खिलाये जाने वाले फीड सामग्री के अनुसार होते हैं। वर्मीकम्पोस्ट के गुण उसमें इस्तेमाल होने वाले सामग्रियों के कारण गुणवत्ता काफी बढ़ जाती है। सामान्यतया इसमें नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, की अच्छी मात्रा पायी जाती है। इसके अतिरिक्त इसमें वृद्धि हारमोन जैसे ऑक्सिन, जिबरैलिन एवं साइटोकाइनिन भी पाये जाते हैं। साथ ही साथ बहुत सारे लाभदायक बैक्टीरिया की भी अच्छी मात्रा उपस्थित रहती है।

भौतिक गुण

1. वर्मीकम्पोस्ट का रंग गहरा भूरा होता है। छूने में मुलायम और दुर्गन्धरहित, खरपतवार बीज रहित एवं दूसरे किसी भी बेकार पदार्थो से रहित होता है।
2. इसके अंदर उपस्थित पोषक तत्व पौधों को आसानी से उपलब्ध होते हैं। इसलिए इसकी उर्वराशक्ति गोबर की खाद की अपेक्षा चार गुणी होती है।
3. मिटट्री के कणों में म्यूकस की कोटिंग होने के कारण मिटट्री में वायुसंचार होता है और इसमें जल संग्रहण की क्षमता काफी अधिक होती है।
4. इसमें 20 से 30 प्रतिशत नमी होती है जो सूक्ष्म पौधों की वृद्धि में सहायक होती है।
5. वर्मीकम्पोस्ट एन्जाइम्स की क्रिया द्वारा पाचित कार्बनिक पदार्थो का एक भुरभुरा दानेदार पदार्थ है जिसमें पोषक तत्व आसानी से सरल रूप में उपलब्ध होते है।
6. अपनी दानेदार प्रकृति के कारण वर्मीकम्पोस्ट भूमि के वायु संचरण एवं जल धारण क्षमता को बढ़ाता है जिस से पौधे की जड़ों की समुचित वृद्धि होती है।
7. केंचुआ तथा उससे संयुक्त सूक्ष्म जीव कम्पोस्ट में दुर्गन्ध पैदा करने वाले रसायनों जैसे H_2S एवं NH_4 आदि को विघटित कर देते हैं जिससे वर्मीकम्पोस्ट दुर्गन्ध रहित हो जाता है।

8. वर्मीकम्पोस्ट को अपेक्षाकृत बनाना, संग्रह करना एवं भूमि में मिलाना आसान होता है क्योंकि यह कम घनत्व वाला होता है। और अधिक पोषक प्रतिशत वाला होता है।

रासायनिक गुण

1. वर्मीकम्पोस्ट में बहुत सारे वायो एक्टिव कम्पाउन्डस जैसे-आग्जीन्स, जिब्रेलिन्स, साइटोकाइनिन्स, विटामिन्स एवं एमीनों एसिड्स होते है जिनमें पौधों की बढ़वार, विकास, प्रजनन एवं उपज को प्रभावित करने की क्षमता होती है।
2. वर्मीकम्पोस्ट में बहुत सारे कृमिक एसिड्स रहते हैं जो पौधों की बढ़वार में वृद्धि करता है। इसके साथ-साथ यह केटायन एक्सचेंज केपेसिटी एवं भूमि की भौतिक दशा को भी सुधारता है।
3. वर्मी कम्पोस्ट में पी.एच. मान 7.0 से 7.5, कार्बन : नेत्रजन 12-15 : एवं नत्रजन, फास्फोरस, पोटैशियम, कैल्शियम, मैग्नीशियम, कोबाल्ट, मोलिब्डेनम, बोरॉन, सल्फर, लोहा, ताँबा, जस्ता, मैंगनीज , जिबरैलिन, ऑक्सिन एवं साइटोकाइनिन की अच्छी मात्रा पायी जाती है जो पौध वृद्धि के लिए आवश्यक है।

जैविक गुण

1. कुल जीवाणु - 10^{10} से अधिक
2. एक्टीनोमाइसिट्स, फफूँद, अजोटोबैक्टर, राइजोबियम, फॉस्फेट सोल्यूवलाइजर, नाइट्रोबैक्टर-10^2-10^6
3. वर्मीकम्पोस्ट में पौधों के लिए लाभकारी सूक्ष्म जीव बहुत अधिक संख्या में होते है जैसे- नाइट्रोजन फिक्सिंग जीवाणु, पी0 एस0 बी0, एक्टीनोमाइसीन फंजाई तथा सेलूलोज एवं लिग्नीन को विघटित करने वाले जीवाणु।
4. वर्मीकम्पोस्ट में मनुष्यों एवं पौधों को हानि पहुँचाने वाले रोगाणुओं की संख्या कम होती है।

वर्मीकम्पोस्ट इस्तेमाल करने से होने वाले फायदे

1. वर्मीकम्पोस्ट अधिक किफायती होने के साथ-साथ भूमि की उर्वराशक्ति भी बढ़ती है।
2. इसके प्रयोग से सब्जियों, फल एवं फूलों वाली फसलों में बीज जमाव अपेक्षाकृत जल्दी होता है एवं पौधे की बढ़वार भी अच्छी होती है।
3. इस खाद के प्रयोग से मिस्टी की जलधारण क्षमता बढ़ती है।

4. भूमि की भौतिक दशा में सुधार होता है एवं भूमिगत जल वायु के संचार में सुधार होता है।
5. यह गोबर की खाद की तुलना में चार गुणा ज्यादा पौष्टिक होता है।
6. पौध की बढ़वार अच्छी होने से पौधरक्षक दवाइयाँ कम लगती हैं जिससे उत्पादन लागत में बचत होती है।
7. इसके अतिरिक्त इसमें सूक्ष्म जीवाणु जो नाइट्रोजन को बढ़ाते हैं, हार्मोन एवं एन्जाइम भी पाये जाते हैं जो पौधों के सम्पूर्ण विकास में सहायक होते हैं।
8. इसके प्रयोग से भूमि के ताप संचरण तथा माइक्रोक्लाइमेट की एकरूपता के लिए अनुकूलता पैदा होती है।
9. इसके व्यवहार से कम से कम पानी में अच्छी खेती संभव है।
10. इससे पैदा किया गया उत्पाद स्वादिष्ट होता है।
11. इसके प्रयोग के बाद बीजों का जमाव जल्दी होता है।
12. दो से चार महीने में केंचुए की संख्या दुगुनी हो जाती है। इस तरह कम्पोस्ट के साथ-साथ केंचुओं को बेचकर अतिरिक्त आमदनी प्राप्त की जा सकती है।
13. वर्मीकम्पोस्ट में कुकून की मात्रा काफी रहती है जो मिट्टी में जाने के बाद केंचुओं की संख्या को बढ़ाती है फलस्वरूप मृदा में वर्मीकम्पोस्ट बनने की प्रक्रिया अपने आप होती रहती है।
14. मिट्टी की संरचनात्मक शक्ति काफी अच्छी हो जाती है।
15. वर्मीकम्पोस्ट बनाने में घरेलू कचरा, खेतों के बेकार पदार्थ तथा कारखानों के कचरों का इस्तेमाल होता है इस तरह प्रदूषण को कम करने में यह काफी सहायक होता है।

वर्मीवाश

वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन के दौरान एक प्रकार के तरल पदार्थ का उत्पादन वर्मीवाश कहलाता है। इसका रंग शहद के रंग के जैसा होता है। केंचुआ अपने खाने के दौरान मिट्टी में सुरंग बनाता है। इसमें बैक्टीरिया (जीवाणु) रहते हैं। इस सुरंग से होकर गुजरने वाला पानी इसमें से पोषक तत्वों को लेकर नीचे आता है और पौधे अवशोषित कर लेते हैं। वर्मीवाश के उत्पादन में यही प्रक्रिया काम करती है।

केंचुए का शरीर तरल पदार्थों से भरा होता है और इसका उत्सर्जन इसके शरीर से लगातार होता रहता है। इसके कारण इसका शरीर हमेशा भींगा हुआ रहता है। इस तरल पदार्थ को संग्रहित किया जा सकता है। यही वर्मीवाश है। यह वर्मीवाश केंचुए को साँस लेने में मदद करता है। वायुमण्डलीय ऑक्सीजन जब इस तरल पदार्थ के सम्पर्क में आता है तब यह छनकर केंचुए के शरीर में अवशोषित हो जाता है। इस

तरल पदार्थ में कुछ ऐसे तत्व भी होते हैं जो केंचुए के शरीर को स्वस्थ रखने में मदद करते हैं। इस तरल पदार्थ में कोई भी जीवाणु जिन्दा नहीं रह पाता है।

वर्मीवाश में बहुत सारे पोषक तत्व मौजूद रहते हैं। साइटोकाइनिन और ऑक्सिन जैसे हार्मोन, विटामिन, अमीनो एसिड, एन्जाईम, कुछ दूसरे तत्व एवं बहुत सारे उपयोगी सूक्ष्म जीवाणु जैसे बैक्टीरिया, कवक, एक्टीनोमाइसिट्स (नेत्रजन फिक्स करने वाले एवं फॉस्फेट को घुलनशील बनाने वाले), ये सभी वर्मीवाश में पाये जाते हैं। इसमें जितने भी पोषक तत्व होते हैं सारे घुलनशील रूप में पाये जाते हैं जो पौधों को सरल रूप में उपलब्ध होते हैं।

वर्मीवाश बनाने की सरल विधि

वर्मीवाश की इकाई ड्रम या बाल्टी, बड़े गमले में आवश्यकतानुसार बनायी जा सकती है। वर्मीवाश बनाने के लिए ड्रम का ऊपरी हिस्सा खुला होना चाहिए। ड्रम की निचली सतह में 1 इंच व्यास का छेद करके एक टोटी लगा लें। अब ड्रम की सबसे निचली सतह पर 5-7 से.मी. ईंट या पत्थर की गिट्टी बिछा दें। पत्थर के ऊपर वाली सतह पर 8-10 सें.मी. मोरंग या बालू बिछा दें। इसके उपर 12-15 से.मी. दोमट मिट्टी बिछायें।

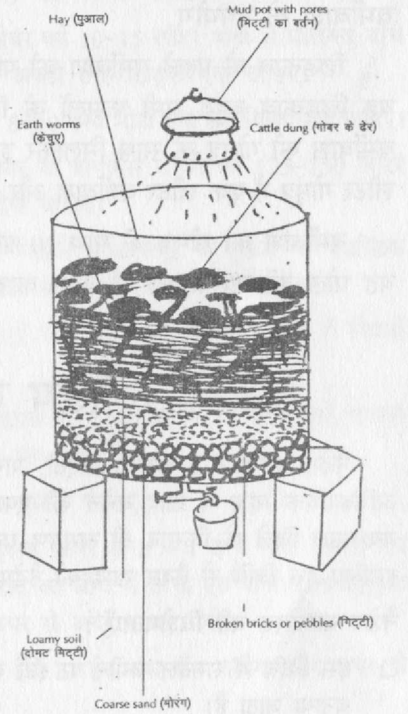

अब इसमें एपिजाईक केंचुए डाल दें। मिट्टी के ऊपर गोबर का ढ़ेर रख दें। गोबर के ऊपर 5-10 से.मी. मोटी पुआल तथा सूखी पत्तियों की तह बना दें। प्रत्येक तह को बनाने के बाद पानी डालें और नल की टोंटी खुली रखें। मोटी पुआल व सूखी पत्तियों वाली सतह को 16-20 दिन तक शाम को पानी से गीला करें। इस प्रक्रिया में नल की टोंटी अवश्य खुली रखें। 16-20 दिन के बाद इकाई में वर्मीवाश बनने की प्रक्रिया शुरू हो जाएगी। अब इस ड्रम के ऊपर एक मिट्टी का घड़ा लटका दें। घड़े के नीचे छेद करके उसमें कपड़े की बत्ती डाल दें जिससे पानी बूँद-बूँद टपकता रहे। शाम को घड़े में 4 लीटर पानी भर दें। प्रत्येक

दिन प्रात: हमें 3 लीटर वर्मीवाश तैयार मिल सकेगा। इस तैयार तरल रूपी वर्मीवाश को छिड़काव द्वारा फसलों इत्यादि पर प्रयोग कर सकते हैं।

वर्मीवाश के लाभ

1. वर्मीवाश के प्रयोग से पौधों की अच्छी वृद्धि होती है।
2. इसके प्रयोग से जल की लागत में कमी तथा अच्छी खेती सम्भव है।
3. पर्यावरण को यह स्वस्थ बनाती है।
4. यह कम लागत पर भूमि की ऊर्वरा शक्ति को बढ़ाती है।
5. इससे मृदा की जलग्रहण शक्ति बढ़ती है।
6. इसके उपयोग से पौध रक्षक दवाईयाँ कम लगती हैं जिससे उत्पादन लागत में कटौती की जा सकती है।
7. इससे पैदा किया गया उत्पाद स्वादिष्ट होता है।
8. इसके उपयोग से ऊर्जा की बचत भी होती है।

वर्मीवाश के उपयोग

छिड़काव के पहले वर्मीवाश को पानी के साथ 10 प्रतिशत का घोल बना लें। यह छिड़काव बहुत सारी फसलों के लिए प्रभावी है। पर्णीय छिड़काव के लिए वर्मीवाश को गोमूत्र के साथ मिलाकर इस्तेमाल किया जा सकता है। इसके लिए 1 लीटर गोमूत्र में एक लीटर वर्मीवाश और 8 लीटर पानी डालकर घोल बनाया जाता है।

वर्मीवाश को गोमूत्र के साथ 10 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव करने से यह घोल कीटनाशक का भी काम करता है।

नैडेप कम्पोस्ट

नैडेप कम्पोस्ट : कचरा, मिट्टी, पानी एवं कम-से-कम गोबर का उपयोग कर अधिकाधिक मात्रा में खाद बनाने की एक उत्तम विधि है। इस विधि को महाराष्ट्र के यवधमाल जिले के किसान श्री नारायण राव पांडरी पांडे (नैडेप काका) ने निकाला है। इसलिए इस विधि से तैयार खाद को नैडेप कम्पोस्ट कहा जाता है।

नैडेप कम्पोस्ट की विशेषताएँ :

- इस विधि में समतल जमीन पर ईंटों का एक विशेष प्रकार का जालीदार ढ़ाँचा/घेरा बनाया जाता है।
- इस घेरे में ईंटों को सीमेंट से इस प्रकार जोड़ा जाता है कि ढ़ाँचों में वायु संचार हेतु पर्याप्त छेद हो।

- ढ़ाँचे की दीवारें 9-10 ईंच मोटी बनायी जाती है।
- ढ़ाँचे को ऊपरी तथा निचली दो पंक्तियों में किसी प्रकार का कोई छेद नहीं होता है।
- ढ़ाँचों की लम्बाई किसान भाई अपनी जरूरत के अनुसार थोड़ा बहुत घटा-बढ़ा सकते हैं।
- इस विधि में गाय के गोबर का ही उपयोग करना सर्वोत्तम होता है। इसमें खेतों एवं उद्यानों का कचरा जो कि सड़-गल सके तथा मिट्टी और पानी की जरूरत होती है।
- इस विधि द्वारा कम्पोस्ट 90-110 दिनों में बनकर तैयार हो जाती है।
- इस प्रकार तैयार कम्पोस्ट में 0.75-1.75 प्रतिशत नेत्रजन, 0.7-0.9 प्रतिशत फास्फोरस तथा 1.2-1.4 प्रतिशत पोटाश के साथ अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं।

ढ़ाँचा भरने की विधि :

- ऊपर बताये गये आकार के ढ़ाँचे में कम्पोस्ट तैयार करने के लिए खेतों एवं उद्यानों का कचरा जैसे फसलों के डंढ़ल, पत्ती, छाल/तना, जड़ें आदि का 1400-1500 किलोग्राम, गोबर 60-100 किलोग्राम, सूखी मिट्टी 1800 किलोग्राम एवं पानी 1500-2000 लीटर (मौसम के अनुसार) की जरूरत पड़ती है।
- ढ़ाँचा को भरने से पहले 4-5 किग्रा० गोबर को 10-15 लीटर पानी में घोलकर ढाँचे के सतह/फर्श एवं अंदर के दीवारों पर अच्छी तरह छिड़क देना चाहिए।
- इसके बाद 200-210 किग्रा० कचरे की 8-10 इन्च मोटी एक तह बिछा देना चाहिए।
- पुनः इस प्रथम तह पर 5.0 किग्रा० गोबर या बायोगैस सलरी को 125-150 लीटर पानी में घोलकर अच्छी तरह छिड़क देना चाहिए।
- इसके ऊपर (दूसरी तह) सूखी मिट्टी जिसमें काँच/पत्थर के टुकड़े या प्लास्टिक आदि न हो, की 200-225 किग्रा० मात्रा का तह बिछा दें।
- अब मिट्टी की सतह पर समुचित पानी की मात्रा का छिड़काव कर दें जिससे गीलापन बना रहे।
- इस प्रक्रिया को तब तक दुहराते रहें जबतक कि पूरा ढ़ाँचा भर न जाए। वैसे लगभग 6-7 बार यह प्रक्रिया दुहराने पर ढ़ाँचा भर जाता है।
- ढ़ाँचे की भराई 1½-2' फीट ऊपर तक करनी चाहिए।
- इस प्रकार से ढ़ाँचे को भरने के बाद इसके ऊपर से 3"-4" इन्च मोटी मिट्टी एवं गाय के गोबर से लिपाई कर ढ़ाँचे की छत को बीच में ऊँचा एवं दोनों तरफ ढालुआ रखा जाता है जिससे वर्षा का पानी ऊपर से अंदर न जा सके।
- लगभग 40-45 दिनों बाद ढ़ाँचा करीब 10-12' ईंच तक धँस जायेगा और ऊपर के सतह पर दरारें दिखने लगेगी।
- ऐसी अवस्था में ढ़ाँचा को पुनः उपरोक्त बताई गई विधि से भरकर ऊपर से मिट्टी-गोबर के मिश्रण से लिपाई कर दें।

❑ कम्पोस्ट अच्छा बने, इसके लिए यह जरूरी है कि ढ़ाँचे में समुचित नमी उपलब्ध रहे।

❑ अतः दुबारा भरते समय गोबर के घोल से ढ़ाँचे के कचरे को भलीभाँति तर कर दें।

❑ इस प्रकार 90-110 दिनों में अच्छी कम्पोस्ट बनकर तैयार हो जाती है।

❑ अनुमानतः उपरोक्त आकार के एक ढ़ाँचे से करीब 35 क्विंटल कम्पोस्ट प्राप्त होता है। इसमें कुछ (करीब 5 क्विंटल) अधसड़ी हो सकती है जिसे प्रयोग में लाने से पहले अलग कर देना चाहिए।

कम्पोस्ट की गुणवत्ता बढ़ाना :

❑ कचरे एवं मिट्टी की तह के बीच एक हल्की तह (3-4 मुट्ठी भर) रॉ-फॉस्फेट या सिंगल सुपर फास्फेट के बिछा देने से कम्पोस्ट की गुणवत्ता काफी बढ़ जाती है।

❑ एक ढ़ाँचे के लिए सिंगल सुपर फास्फेट की 3-4 किग्रा० मात्रा पर्याप्त होती है।

❑ इसके अतिरिक्त ढ़ाँचे के भरने के 75-80 दिनों बाद ढ़ाँचे की छत पर बाँस की सहायता से नीचे की सतह तक जगह-जगह पर छिद्र कर दें।

❑ इन छिद्रों में 500 ग्राम पी०एस०बी०, 500 ग्राम एजेटोबेक्टर, 500 ग्राम राइजोबियम को 23 लीटर पानी में घोल बनाकर डाल दें एवं पुनः इन छिद्रों को लीपकर बंद कर छोड़ दें। इससे कम्पोस्ट की गुणवत्ता बढ़ने के साथ-साथ कम्पोस्ट बनने की प्रक्रिया में भी तेजी आती है।

हरी खाद

हरी खाद जैविक खाद के अन्तर्गत एक महतवपूर्ण अवयव है जो न केवल सारे पोषक तत्वों की आपूर्ति करता है वरन् मिट्टी में हारमोन, विटामिन की मात्रा बढ़ाता है। साथ ही, खरपतवार की वृद्धि को भी रोकता है। दलहनी तथा गैर दलहनी फसलों को उनके वानस्पतिक वृद्धि काल में उपयुक्त समय पर मृदा उर्वरता एवं उत्पादकता बढ़ाने के लिए जुताई करके मृदा में अपघटन के लिए दबाना ही हरी खाद है।

उद्देश्य :

हरी खाद के उपयोग का मुख्य उद्देश्य है वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को मृदा में स्थिर करना एवं मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को बढ़ाना।

हरी खाद के प्रयोग से लाभ :

1. मृदा की भौतिक एवं रासायनिक संरचना अच्छी होती है।
2. कृषि योग्य भूमि में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा को स्थिर करता है।
3. मिट्टी में उपस्थित लाभदायक सूक्ष्मजीवों के लिए यह खाद्य पदार्थ का काम करता है जो इन्हें खाकर बहुत तेजी से अपनी संख्या को बढ़ाते हैं। फलस्वरूप मिट्टी के जैविक गुणों में वृद्धि होती है।

4. मृदा के सूक्ष्जीवों की संख्या में वृद्धि होने पर हरी खाद का अपघटन तेजी से होने लगता है एवं इस प्रक्रिया के दौरान जो पोषक तत्व निकलते हैं, वे पौधों को आसानी से मिल जाते हैं।
5. हरी खाद के प्रयोग से मृदा में वायु संचार अच्छा हो जाता है।
6. हरी खाद वाले फसलों के प्रयोग से हरी खाद के अतिरिक्त कुछ खाद्य पदार्थ, जलावन एवं चारा फसलें भी प्राप्त होती है।
7. हल्की तथा भारी दोनों प्रकार की मृदाओं में कार्बनिक पदार्थ की वृद्धि से उपज में वृद्धि के साथ-साथ मृदाओं की जल धारण क्षमता में भी वृद्धि होती है।
8. मिट्टी में ह्यूमस की मात्रा बढ़ने के कारण हल्की मिट्अी की जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है।
9. मिट्टी के तापमान को कम करता है एवं मिट्टी को जलक्षारण एवं वायुक्षारण से बचाता है।
10. ये पौधे मिट्टी की गहराई में उपस्थित पोषक तत्वों को लेकर फिर अपघटन के दौरान सतही मिट्टी में मिला देते हैं। फलस्वरूप भविष्य में लगनेवाली फसलों को ये पोषक तत्व आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।
11. रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते हुए खर्च को कम किया जा सकता है।
12. मृदा उर्वरता को बढ़ाने के साथ ही साथ उत्पादन लागत को भी कम किया जा सकता है।
13. हरी खाद की सघन फसल के कारण खेत में खरपतवारों पर भी नियंत्रण होता है।
14. अम्लीय तथा क्षारीय दोनों प्रकार की मृदाओं की पी०एच० मान में सुधार होता है।
15. पोषक तत्वों का मिट्टी के नीचेवाली सतहों में क्षरण कम होता है।
16. दलहनी वर्ग वाली हरी खाद फसलें मिट्टी में वायुमण्डलीय नेत्रजन को स्थिर करती है।
17. हरी खाद चूना फास्फेट तथा अन्य सूक्ष्म तत्वों की घुलनशीलता को बढ़कार मिट्टी में देता है। यह प्रक्रिया मृदा में सूक्ष्म जीवाणुओं की क्रियाओं से तथा सड़ने के दौरान कार्बनिक अम्ल पैदा होने के कारण होता है।
18. ऐसा देखा गया है कि हरी खाद की एक फसल एक मौसम में 60 से 100 किलो नेत्रजन प्रति हेक्टेयर मिट्टी में स्थिर करती है।
19. हरी खाद समस्याग्रस्त भूमि को भी सुधारने में मदद करती है। ऊसर भूमि में यदि ढैंचा को 4-5 साल लगातार लगाया जाए तो सारा नमक घुलकर मिट्टी के नीचे चला जाता है और वह मिट्टी फसल लगाने योग्य हो जाती है।
20. इसी तरह इमली के पत्ते या आर्जीमोन के पत्तों को मिट्टी में मिलाया जाय तो मिट्टी की स्थिति सुधरती है।
21. हरी खाद के इस्तेमाल से फसलों की उपज में 15 से 20 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
22. धान की फसल में हरी खाद के इस्तेमाल से विटामिन एवं प्रोटीन की मात्रा चावल में बढ़ जाती है।

23. कुछ हरी खाद वाली फसलें जैसे पोई के पत्ते एवं नीम के पत्तें को मिट्टी में मिलाने पर हानिकारक कीटों से भी रोकथाम होती है।

हरी खाद के लिए फसलों का चुनाव :

हरी खाद के लिए दलहनी तथा अदलहनी दोनों प्रकार की फसलें ली जा सकती हैं जो कि जलवायु की दशा के ऊपर निर्भर करता है। इसके लिए मुख्य रूप से सनई, ढैंचा, उर्द, मूंग, लोबिया तथा ग्वार का प्रयोग किया जाता है तथा अदलहनी फसलों में ज्वार, बाजारा, मक्का तथा सूर्यमुखी की फसलों को प्रयोग में लाया जा सकता है, क्योंकि ये फसलें कम समय में ही काफी कार्बनिक पदार्थ की मात्रा उपलब्ध करा सकती हैं। इनमें वृद्धि शीघ्र होती है। साथ ही साथ मृदा में शीघ्र ही सड़ने योग्य होती है। उर्द या मूंग को हरी खाद के रूप में प्रयोग की दशा में चाहें तो इसकी फलियों को तोड़ने के पश्चात् भी प्रयोग किया जा सकता है, इससे हमें दोहरा लाभ प्राप्त हो सकता है। दलहनी फसलों में बुआई के समय 20-25 किग्रा० नेत्रजन तथा अदलहनी फसलों के लिए 40-60 किग्रा० नेत्रजन प्रति हेक्टेयर प्रयोग ज्यादा लाभकारी रहता है। फास्फोरस तथा पोटाश का प्रयोग भी बुआई के समय ही आवश्यकतानुसार मृदा में उनकी उपलब्धता के अनुसार उपयोगी होती है।

फसल	*बुआई का समय*	*बीज की मात्रा किग्रा/हे०*	*अनुमानित हरी खाद उपज टन/हे०*	*अनुमानित उपलब्ध नेत्रजन किग्रा/हे०*
सनई	अप्रैल से जुलाई	50-60	25-30	75-100
ढैंचा	,,	40-50	25-30	90-120
उर्द	,,	20-25	10-15	40-50
मूंग	,,	20-25	10-25	40-50
लोबिया	,,	45-55	15-20	75-90
ग्वार	,,	30-40	20-25	60-70
ज्वार	,,	40-50	20-25	50-60
बाजरा	,,	40-50	20-25	50-60

राइजोबियन द्वारा बीजोपचार :

इन फसलों के बीजों को लगाने के पहले उन्हें राइजोबियम से उपचारित करना जरूरी होता है क्योंकि प्रत्येक फसल के लिए राइजोबियन बैक्टीरिया की अलग-अलग प्रजातियों की जरूरत पड़ती है जो मिट्टी में वायुमण्डलीय नेत्रजन की अवशोषित कर जड़ों में हल्के गुलाबी रंग की गांठें बनाती हैं। लेकिन मिट्टी में इन प्रजातियों की अनुलब्धता हुई तो उल्टा असर हो सकता है यानि मिट्टी में नेत्रजन की कमी हो जाती है। इसलिए बीजों को राइजोबियम की उचित प्रजाति से बीजापचार कर बुआई करना उचित है।

जैविक गाँव

समस्तीपुर के ताजपुर प्रखंड के जैविक गाँव कोठिया को आदर्श जैविक गाँव मानते हुए कृषि विभाग द्वारा प्रत्येक जिले में जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए एक गाँव का चयन किया गया है।

जैविक खेती, कृषि उत्पादन की एक ऐसी प्रणाली है जिसमें कृत्रिम रासायनिक खादों, कीटनाशी दवाओं, फसल बढ़ाने वाले हारमोन्स, कृत्रिम रसायनों से बने पशु आहारों के प्रयोग के स्थान पर मृदा की उत्पादकता को बनाये रखने, पौधों को उपयोगी तत्व उपलब्ध कराने, खरपतवार एवं कीट प्रबंधन हेतु निम्न विषयों के कुशल प्रबंधन पर ध्यान दिया जाता है।

क. फसल चक्र (क्राप रोटेशन)

ख. फसल अवयक (क्रॉप रेज्यूड्यूज)

ग. जानवरों से प्राप्त गोबर खाद

घ. लेग्यूम्स

च. हरी खाद (ग्रीन मैन्यूर)

छ. अन्य श्रोतों से प्राप्त जैविक अवषेश

ज. जैविक खरपतवार एवं कीट प्रबंधन

जैविक खेती के अंतर्गत मृदा को एक जीवित प्रणाली माना गया है। जिसमें लाभकारी सूक्ष्मजीवी की भूमिका अहम मानी गई है। जो मृदा, पौधों, जानवरों एवं मनुष्य के बीच एक आवश्यक कड़ी स्थापित करती है।

जैविक गाँव में जैविक पद्धति से खेती करने पर :

1. मृदा क्षरण एवं मृदा की उत्पादकता को बनाये रखा जा सकता है।
2. सिंचाई हेतु प्रयोग होने वाले पानी का प्रदूषण लगभग ना के बराबर होता है।
3. वन्य जीव जन्तुओं को सुरक्षा मिलती है।
4. जैव विविधता में अभिवृद्धि होती है तथा ऐसे क्षेत्रों का विकास होता है।
5. पशुओं को अच्छा उपचार मिलता है।
6. बाह्य श्रोतों से प्राप्त आगत अवयव एवं ऊर्जा का कम प्रयोग होता है।
7. खाद्य पदार्थों में कीटनाशी रसायनों के अवषेशों की मात्रा नगण्य हो जाती है।
8. एन्टीबायोटिक्स जानवरों से प्राप्त उत्पादन हारमोन्स एवं एन्टीबायोटिक्स के अवशेषों से मुक्त रहते हैं।
9. उत्पाद गुणवत्ता एवं स्वाद में अच्छे होते हैं तथा इनकी भण्डारण क्षमता अच्छी होती है।

जैविक गाँव में जैविक खेती के प्रमुख उद्देश्य :

1. उचित मात्रा में उच्च गुणवत्ता के पोषक उत्पादों को पैदा करना।
2. कृषि पद्धति में सूक्ष्मजीवियों, पौधें और जीव जन्तुओं के सहयोग से बायोलोजिकल साइकिल को बढ़ावा देना।
3. मृदा की उर्वरकता को बनाये रखना।
4. कृषि कार्यों में पानी का उचित प्रयोग करते हुए पानी के श्रोतों का संरक्षण करना।
5. पानी और मृदा का संरक्षण करना।
6. जैव पदार्थों एवं पोशक तत्वों की पूर्ति फार्म के क्लोज सिस्टम से करना।
7. जहाँ तक संभव हो जैविक फार्म के उन अवयवों का प्रयोग करना जिनकों कि फार्म पर ही रिसाइकिल किया जा सके।
8. कृषि कार्यों द्वारा होने वाले प्रदूषण को न्यूनतक स्तर पर रखना।
9. गुणसूत्रों के फेरबदल से प्राप्त प्रजातियों या अवयवों का प्रयोग न करना।
10. फसल तंत्र की जैव विविधता को बनाये रखने के साथ – साथ आस–पास के वन्यजीव को को संरक्षण भी करना।

माननीया कृषि मंत्री डा0 रेणु कुमारी कुशवाहा कृषि उपादान सह किसान मेलों में उपस्थिति होकर उर्वरकों की अनुउपलब्ध की समस्या से रु–ब–रु हुई, जिसके समाधान के लिए जैविक ग्राम कोठिया की तर्ज पर प्रत्येक जिले में एक जैविक ग्राम बनाने का निर्णय हुआ। जिससे आने वाले दिनों में पूरा प्रदेश जैविक प्रदेशों के रूप में जाना जा सके एवं उर्वरकों की समस्या से किसान उबर सके।